स्वतन्त्र भारत में प्रगति





प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

श्रावण १८८१ (अगस्त १९५९)

तीस नये पैसे

निदेशक, प्रकाशन विभाग, दिल्ली-८ द्वारा प्रकाशित एवं विश्व भारतीय प्रेस, पहाड़गंज, नई दिल्ली में मुद्रित।

भूमिका

भारतवर्ष को आजादी मिले १२ साल हो गए। इतिहास की दृष्टि से यह समय बहुत ही थोड़ा है। फिर भी इस बीच में आजाद भारत की सरकार को जिन मसलों का सामना करना पड़ा उनकी संख्या बहुत बड़ी है। केवल राष्ट्रीय क्षेत्र में ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी हमें कई बार बहुत बड़ी गुत्थियों को सुलझाना पड़ा। उनमें से कई समस्याएं तो ऐसी रहीं जिन्हें सुलझाने में यदि जरा भी कमी रहती, तो राष्ट्र के रूप में भारत का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता।

यह नहीं कह जा सकता कि यह समस्याएं जिन तरह सुलझाई गईं वे तरीके काम चलाऊ थे, बल्कि अधिकांश क्षेत्रों में तो संसार को एक मार्ग दिखलाया गया है। सच तो यह है कि आज भारत अपनी राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीति के कारण एक बड़ी हद तक दूसरे देशों के लिए आदर और अनुकरण का पात्र बन चुका है।

राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत का लक्ष्य नए समाज का निर्माण है, एक ऐसा समाज जिसमें विषमतामूलक ढांचे को बदल कर समाजवादी समाज की स्थापना की जाए। भारत ने किसी प्रकार के किताबी समाजवाद को नहीं अपनाया है, भारत के समाजवाद का मूलमन्त्र है मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण असम्भव कर दिया जाए। इसी नीति को आधार मान कर अस्पृश्यता निवारण तो संविधान का अच्छेद्य अंश बन गया है, कई तरह के और सामाजिक कानून बराबर बन रहे हैं और उन्हें लागू करने का प्रयत्न किया जा रहा है, जिससे पुरुष और स्त्री, ब्राह्मण और अछूत, पूंजीपति और मजदूर तथा जमींदार और किसान आदि की विषमता दूर हो जाए। हमारे यहां तो जमींदारी प्रथा का ही अन्त कर दिया गया।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत का उद्देश्य बराबर शान्ति और सद्भावना की शक्तियों को बल पहुंचाना तथा युद्ध और उपनिवेशवाद की शक्तियों को नीचा दिखाना रहा है। किसी भी निष्पक्ष समालोचक को यह मानना ही पड़ेगा कि गत १२ सालों में भारत ने इन लक्ष्यों की पूर्ति में कुछ उठा नहीं रखा। हमारे प्रधान मन्त्री सारे संसार में शान्ति के प्रतीक समझे जाते हैं। उनके द्वारा चलाई हुई अन्तर्राष्ट्रीय नीति किसी एक पक्ष को तुष्ट करने के लिए नहीं है बल्कि न्याय पर आधारित है जिसका ठोस रूप पंचशील है।

हमारी राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों का ब्यौरे में वर्णन करने के लिए सैकड़ों पृष्ठ चाहिएं। इसके एक-एक पहलू पर एक-एक पुस्तक लिखी जा सकती है। भारत ने गत १२ सालों में जो प्रगति की है, उसकी कुछ झलक इन थोड़े से पृष्ठों में पेश की जा रही है।

स्वतंत्रता के साथ भारत के दो टुकड़े

१५ अगस्त, १९४७ को भारत आज़ाद हुआ। पर यह आज़ादी जिस रूप में और जैसी परिस्थितियों में आई, उसे पूरी निदान नहीं कहा जा सकता। आज़ादी के साथ-साथ भारत के दो टुकड़े कर दिए गए। एक का नाम पाकिस्तान रखा गया और दूसरे का नाम भारत ही रहा। वर्षों से मुस्लिम लीग ने खुल कर जिस दो राष्ट्र के सिद्धान्त का प्रचार किया था, वह इस तरह ज़हरीली बेल के रूप में सामने आया। दो राष्ट्र के सिद्धान्त के मानने वालों का यह कहना था कि एक ही गांव तथा ज़िले में सैकड़ों वर्षों से रहने वाले मुसलमान और हिन्दू दो भिन्न जातियों के हैं। इसलिए उनका देश भी अलग होना चाहिए। कुछ थोड़े-से देशभक्त मुसलमानों के अलावा बाकी सभी भारतीय मुसलमान इस मूर्खतापूर्ण प्रचार की बाढ़ में बह गए, और जो बात केवल कुछ थोड़े-से पढ़े-लिखे मुसलमानों का नारा मात्र थी, वह एक आन्दोलन के रूप में सामने आई और उसने एक बार हमारी राष्ट्रीयता की जड़ ही काट डालीं। नानक, कबीर, रहीम और अकबर आदि ने एकता के जिस पौधे को यत्न से सींचा था, वह मुरझा गया। भारत के दो टुकड़े हो गए।

भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र

यह घटना अपने में ही बड़ी दुःखदायी रही, पर इसके साथ जो और घटनाएं हुईं, मानव ने जिस तरह दानव का रूप धारण किया और खुल कर खून की होली खेली, वे और भी दुखद थीं। उनकी प्रतिध्वनि आज भी सुनी जा सकती है। इसके अलावा क्या पाकिस्तान बन जाने से दो राष्ट्र का सिद्धान्त मानने वाले लोगों का स्वप्न पूरा हो गया? नहीं। आज इतने साल बाद भी भारत में चार करोड़ के लगभग मुसलमान मौजूद हैं और इन मुसलमानों की संख्या बराबर बढ़ ही रही है, क्योंकि स्वराज्य के बाद से पाकिस्तान गए हुए मुसलमान बराबर भारत लौट रहे हैं। उन्होंने पाकिस्तान में अपनी आंखों से देख लिया कि दो राष्ट्र का सिद्धान्त उन्हें भले ही कुछ दे, पर रोटी नहीं दे सकता। अब तो पकिस्तान में नाम को भी लोकतन्त्र नहीं रह गया। वहां सैनिक अधिनायक है, और सो भी शायद विदेशियों के इशारे पर चलने वाला।

जो मुसलमान भारत में रह गए, उनमें से बहुतेरे अंग्रेज़ों के ज़माने में मुस्लिम लीग द्वारा प्रचारित दो राष्ट्र के सिद्धान्त के समर्थक थे। पर अब वे अपने तजुरबे से समझ गए हैं कि आज़ाद भारत हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, बौद्धों, सिक्खों, पारसियों सबकी समान रूप से मातृभूमि है। यहां सभी धर्मों के मानने वालों के लिए सारी सुविधाएं मौजूद हैं।

विभाजन के बाद आपसी मारकाट

देश के विभाजन के बाद पंजाब में, बल्कि कहना चाहिए, दोनों पंजाबों में बहुत मारकाट हुई। सारी मानव जाति के इतिहास में शान्ति काल में इससे भयानक मारकाट का उदाहरण कहीं नहीं है।

भारत अपने आदर्श पर अडिग रहा

पश्चिम पंजाब में हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचार की कहानियां बराबर आ रही थीं, फिर भी भारत ने अपने आदर्श का झण्डा बुलन्द रखा और अपनी ओर शान्ति कायम रखने की कोशिश की। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने यह साफ-साफ कहा—'यदि पूर्व पंजाब में पूरी शान्ति हो जाए तो पश्चिम पंजाब के अल्पसंख्यकों की रक्षा पर हम अधिक ध्यान दे पाएंगे।'

दूसरे शब्दों में, हमारे प्रधान मन्त्री ने कहा कि उधर शान्ति हो या न हो, इधर अर्थात् हमारी ओर शान्ति होनी चाहिए। इस बात पर अमल भी किया गया। सन् १९४७ के सितम्बर में दिल्ली में भी साम्प्रदायिकता यानी फिरकापरस्ती की वे लहरें फैलीं, जिनमें पंजाब जल रहा था।

पर दिल्ली के इस दंगे को बड़ी मुस्तैदी के साथ दबा दिया गया। हमारे प्रधान मन्त्री को यह स्पष्ट रूप से कहना पड़ा कि मुस्लिम लीग ने देश को बहुत बड़ी हानि पहुंचाई है, क्योंकि उसकी देखादेखी भारत में भी यह नारा बुलन्द किया जाने लगा कि भारत को हिन्दू राष्ट्र बनाया जाए। उन्होंने बताया कि भारत के किसी भी तबके की ओर से इस प्रकार की जवाबी मांग करना मुस्लिम लीग का विरोध करना नहीं, बल्कि उस के सामने सिर झुकाना है।

हमारे राष्ट्र के आदर्श का स्पष्टीकरण

इन्हीं दिनों एक पत्रकार सम्मेलन में बोलते हुए पं० नेहरू ने यह कहा—'जहां तक भारत का सम्बन्ध है हमने इस बात को बहुत साफ तरीके पर कह दिया है कि सरकारी तथा अन्य हैसियत से हम किसी भी प्रकार ऐसे राष्ट्र की कल्पना नहीं कर सकते जिसे साम्प्रदायिक या धार्मिक राष्ट्र कहा जाए। हम यदि किसी आदर्श पर चल सकते हैं तो वह है धर्म-निरपेक्ष, असाम्प्रदायिक लोकतांत्रिक राष्ट्र का आदर्श, जिसमें हर आदमी चाहे वह किसी भी धर्म का मानने वाला हो, बराबर अधिकार और सुविधाओं का हकदार होगा।' उन्होंने और भी कहा—'हम धर्म-निरपेक्ष, लोकतांत्रिक राष्ट्र की स्थापना करना चाहते हैं। ६५ साल पहले जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई थी, तब से यही हमारा आदर्श रहा है और हम बराबर इसी आदर्श को लेकर आगे बढ़ रहे हैं।

स्मरण रहे कि पं० जवाहरलाल नेहरू की यह वाणी किसी कोरे आदर्शवाद या कठमुल्ला सिद्धान्तवादी की वाणी नहीं थी, बल्कि यह एक कर्मठ राजनीतिज्ञ की वाणी थी, जिसके हाथों में इन दिनों राष्ट्र की बागडोर थी और जिसके चारों तरफ केवल मुसलमानों में ही नहीं हिन्दुओं में भी साम्प्रदायिकता का बवण्डर उठ रहा था।

राष्ट्रपिता साम्प्रदायिकता की वेदी पर

राष्ट्रपिता का बलिदान भी मानो इसी आदर्श को कार्यरूप में परिणत करने के यज्ञ में पूर्णाहुति के रूप में रहा, क्योंकि वे हिन्दू साम्प्रदायिकता की बलि वेदी पर भेंट चढ़े। राष्ट्रपिता का बलिदान ३० जनवरी, १९४८ को हुआ। यह भारत के लिए बहुत बड़ी विपत्ति थी, क्योंकि ३० वर्षों से भारत के जन-आन्दोलन की बागडोर उन्हीं के मज़बूत हाथों में रही।

पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपने एक भाषण (३ अप्रैल, १९४८) में इस राष्ट्र के गांधीवादी आदर्श को स्पष्ट कर दिया था—'हम सदा इस बात पर बल देते रहे हैं कि राजनीति और नैतिकता में मेल रखा जाए और मैं आशा करता हूं कि हम सदा इसी नीति पर चलेंगे। चौथाई सदी या इससे भी अधिक काल से महात्मा गांधी ने हमें राजनीति को नैतिक स्तर पर रखना सिखाया है। हमें इसमें कहां तक सफलता मिली है, इसका निर्णय संसार पर और आने वाली पीढ़ियों पर है। लेकिन, कम से कम यह एक बड़ी बात थी कि

हमने इस महान आदर्श को सदा अपने सामने रखा और अपने निर्बल और लड़-खड़ाते ढंग से सही, इसे कार्यान्वित करने की कोशिश की। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि राजनीति और कट्टरता या धर्मान्धता का मेल जिसका परिणाम साम्प्रदायिक राजनीति है एक अत्यन्त भयानक संयोग है और हमें इसका अन्त कर देना चाहिए।'

कश्मीर पर पाकिस्तान का हमला

तब से बराबर भारत इसी नीति पर चलता रहा है। उधर शुरू से पाकिस्तान की ओर से कुछ छेड़-छाड़ होती ही रही। इस छेड़-छाड़ का सबसे भयंकर रूप कश्मीर पर पाकिस्तान का हमला था। कश्मीर के सम्बन्ध में पाकिस्तान सरकार की ओर से तरह-तरह के प्रचार किए गए हैं, पर असलियत यह है कि हालांकि पाकिस्तान ने खुल कर कश्मीर पर हमला नहीं किया, पर इसमें सन्देह नहीं कि उस पर जो हमला हुआ, उसमें पाकिस्तान का भी हाथ था। थोड़े में असलियत इस प्रकार है—

पहले पाकिस्तान के अधिकारियों ने कश्मीर की जनता के लिए जरूरी सामान, जैसे अनाज, नमक, शक्कर और पैट्रोल आदि का कश्मीर जाना रोककर उस पर दबाव डाला कि वह पाकिस्तान में शामिल होना स्वीकार कर ले। उन दिनों कश्मीर में माल भेजने का मुख्य रास्ता पाकिस्तान से होकर निकलता था।

यह आर्थिक दबाव जब सफल नहीं हुआ, तब सैनिक दबाव शुरू हुआ। कुछ दिनों के बाद भारत सरकार को यह पता चला कि जम्मू प्रान्त के रियासती प्रदेश में आक्रमणकारी दल चुपके-चुपके प्रवेश कर रहा है। यह भी खबर मिली कि कश्मीर और उत्तर पाकिस्तान की सरहद पर हथियारबन्द लोगों का जमाव हो रहा है। थोड़े दिनों में ही कश्मीर पर कबायलियों का हमला हो गया। जम्मू प्रान्त पर पश्चिम पंजाब से आक्रमण करने वालों की संख्या बढ़ी और वे उस प्रान्त में फैल गए। कश्मीर सरकार की सेना, जिसे इन हमलों का कई जगहों पर मुकाबला करना पड़ा, छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट गई और धीरे-धीरे उसकी युद्ध करने की शक्ति जाती रही। हमला संगठित था। आक्रमणकारियों के पास कुशल अफसर और आधुनिक हथियार थे। पाकिस्तान के कबायली जम्मू प्रान्त के एक बड़े हिस्से पर अधिकार करने में सफल हुए। पुंछ इलाके पर उनका अधिकार हो गया।

इसी समय रियासत के अधिकारियों ने भारत सरकार से हथियार और लड़ाई का सामान मांगा। भारत सरकार ने सिद्धान्त रूप से सामान देना स्वीकार कर लिया, पर असल में कोई सामान नहीं भेजा गया। कश्मीर नेशनल कान्फ्रेंस के सभापति शेख अब्दुल्ला जेल से छोड़ दिए गए। उन्होंने तथा कश्मीर के अन्य नेताओं ने यही राय दी कि भारत सरकार के साथ कश्मीर का सम्बन्ध दृढ़ होना चाहिए।

परिस्थिति बहुत जल्दी-जल्दी बिगड़ती गई और २६ अक्तूबर को स्थिति यह थी कि धावा करने वाले श्रीनगर की ओर बढ़ रहे थे, और कोई ऐसी फौज मौजूद नहीं थी जो उसका सामना करती। कश्मीर सरकार के लिए तुरन्त फैसला करना जरूरी था, और बाद की घटनाओं को देख कर यह कहा जा सकता है कि यदि फैसला करने में २४ घण्टे की भी देर हो जाती तो श्रीनगर की वही हालत होती जो मुजफ्फराबाद, बारामूला और दूसरी जगहों की हुई। भारत सरकार ने यह तय किया कि किसी भी हालत में कश्मीर की बरबादी नहीं होनी चाहिए। अन्त में भारत सरकार ने भारत संघ में कश्मीर के प्रवेश का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, पर कश्मीर के महाराज को यह पूरी तरह स्पष्ट कर दिया गया कि अब से उनकी सरकार को जनता की इच्छा पर चलना होगा और नेशनल कान्फ्रेंस को अन्तर्कालीन सरकार बनाने का काम सौंपना होगा। इसके अलावा यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि जैसे ही कश्मीर में कानून और व्यवस्था स्थापित हो जाए और उनकी भूमि आक्रमणकारियों से मुक्त हो जाए, वैसे ही रियासत के भारत प्रवेश का प्रश्न जनमत से तय किया जाए।

कानूनी और नैतिक दृष्टि से कश्मीर भारत का अंग

इस प्रकार कानूनी और नैतिक दोनों दृष्टियों से कश्मीर के भारत प्रवेश पर कोई अंगुली नहीं उठा सकता। कश्मीर के महाराज ही नहीं, बल्कि कश्मीरी जनता के एकमात्र संगठन नेशनल कान्फ्रेंस की पुकार पर ही कश्मीर को भारत में शामिल किया गया। इसके बाद भारतीय सेना कश्मीर पहुंची और उसने कश्मीरी जनता के सहयोग से आक्रमणकारियों का सामना किया और उन्हें पीछे हटा दिया। इस सम्बन्ध में यह भी विशेष ध्यान योग्य है कि यह लड़ाई आसानी से भारत और पाकिस्तान के बीच लड़ाई बन सकती थी, पर भारत सरकार ने बड़ी विवेकशीलता से लड़ाई के मैदान को सीमित रखा। पाकिस्तान के साथ ज्यादा उलझन में न पड़ने तथा सारी दुनिया के सामने सारे

तथ्यों को रखने के लिए ३० दिसम्बर, १९४७ को भारत सरकार ने यह मामला संयुक्त राष्ट्र संघ के सामने रख दिया।

सारी दुनिया को यह मालूम हो गया कि पाकिस्तान सरकार ने इस हमले को न केवल उकसाया और हमलावरों की पीठ ठोंकी, बल्कि इस लड़ाई में उसने पूरी-पूरी सहायता भी दी। पाकिस्तान की सेना भी इसमें सक्रिय भाग ले रही थी, पर पाकिस्तान की सरकार इससे इन्कार करती रही। भारत सरकार ने कश्मीर में तभी सैनिक भेजे, जब कश्मीरी जनता के प्रतिनिधि नेशनल कान्फ्रेंस की ओर से उसे ऐसा करने के लिए निमन्त्रण मिला।

महात्मा जी का आशीर्वाद

पं० जवाहरलाल नेहरू ने ८ मार्च, १९४८ को यह कहा था कि 'कश्मीर के मामले में भारत सरकार ने जो कुछ भी किया, उसमें उन्हें महात्मा गांधी का समर्थन प्राप्त था।' उनके शब्द यों थे—'वास्तविक कठिनाई हमारे भीतर से पैदा होने वाली कठिनाई थी, यह अन्तर्द्वन्द्व था। यह कदम हमें कहां पहुंचाएगा ? दूसरी ओर, कश्मीर की जनता की—उन लोगों की, जिन पर आक्रमण हो रहा था और जिनका विनाश किया जा रहा था— जबरदस्त पुकार थी। हम उनसे 'ना' नहीं कह सकते थ। साथ ही, हम ठीक-ठीक नहीं जानते थे कि यह कदम हमें कहां ले जाएगा। इस अन्तर्द्वन्द्व में—जैसा कि मैं अक्सर करता था—मैं महात्मा गांधी के पास सलाह लेने गया। फौजी मामलों में उनके लिए परामर्श देना स्वाभाविक नहीं था। इनके बारे में वे जानते ही क्या थे ? उनके युद्ध अन्तरात्मा के युद्ध होते थे। लेकिन में आपको बताऊं कि मेरी बातों को सुन कर, जिस कार्रवाई का मैंने प्रस्ताव किया उस पर उन्होंने 'नहीं' नहीं कहा। उन्होंने देखा कि परिस्थिति आ पड़ने पर एक सरकार को अपने कर्तव्य का पालन करना, चाहे उसे सैन्य-संचालन द्वारा ही करना पड़े, ज़रूरी हो जाता है। इन चन्द महीनों में, जब तक वे हमारे बीच से उठ नहा गए, मुझे बहुत-से अवसरों पर उनसे कश्मीर के विषय में बात करने का अवसर मिला, और मेरे लिए यह बड़े सुख की बात थी कि जो भी हमने किया था उसमें हमें उनका आशीर्वाद प्राप्त था।'

तब से जो घटनाएं हुई हैं, उनसे यह साबित हो चुका है कि कश्मीर में भारत का हस्तक्षेप कश्मीरी जनता के हित में रहा। कश्मीर की एक संविधान

सभा बनी और उसम सर्वसम्मति से भारत में प्रवेश करने का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। चलते हुए यह बता दिया जाए कि इस समय कश्मीर के हिन्दू राजा बल्कि युवराज वहाँ के वैधानिक प्रधान मात्र हैं। सारी शक्ति वहां के मन्त्रिमण्डल के हाथ में है, जो कश्मीरी जनता के द्वारा चुना गया है। कश्मीर के पिछड़ेपन को दूर करने के लिए भारत हर सम्भव उपाय काम में ला रहा है। कश्मीर के विकास के लिए भारत के दूसरे प्रान्तों की तरह कश्मीर पर भी पूरा खर्च हो रहा है। रेल के किराए में बहुत अधिक सुविधा देकर हज़ारों यात्री प्रतिवर्ष कश्मीर भेजे जाने को उत्साहित किए जा रहे हैं, जिससे कश्मीर और भारत का सम्बन्ध और भी दृढ़ हो रहा है। वनिहाल में एक सुरंग बना कर एक ऐसा रास्ता तैयार है, जो बारहों महीने चालू रह सकता है। इस पर करीब ३ करोड़ रुपए खर्च हुए हैं। इस सुरंग के एक रास्ते से २२ दिसम्बर, १९५६ से आना-जाना शुरू हो गया है। दूसरा रास्ता भी बन गया है। यह संसार का सबसे बड़ी और आधुनिक प्रकार की सुरंगों में है। इसकी लम्बाई एक मील से कुछ ऊपर है और इसमें हर दिशा में प्रति घण्टा ४०० गाड़ियां जा सकेंगी।

शरणार्थी समस्या का हल

१९५७ के अन्त तक पाकिस्तान से ८८.६ लाख विस्थापित भारत आए। इनमें से ४७.४ लाख व्यक्ति पश्चिम पाकिस्तान से तथा बाकी लोग पूर्व पाकिस्तान से आए। पश्चिम पाकिस्तान से भारी तादाद में विस्थापितों का आना रुक चुका था, पर पूर्व पाकिस्तान से विस्थापित व्यक्ति भारी संख्या में अक्तूबर १९५६ तक भारत आते रहे।

विस्थापित व्यक्तियों को सहायता देने तथा उन्हें बसाने के लिए दिसम्बर १९५७ के अन्त तक सरकार ने जो सहायता दी, उसका कुछ ब्यौरा इस प्रकार है—पश्चिम पाकिस्तान से आने वाले विस्थापितों पर कुल खर्च २४९·२५ करोड़ रुपए और पूर्व पाकिस्तान से आने वाले विस्थापित पर कुल खर्च १२८·८६ करोड़ रुपए हुए। इस प्रकार ३५० करोड़ रुपए से अधिक रकम शरणार्थियों पर खर्च हुई।

पूर्व पाकिस्तान से आने वाले ९७ प्रतिशत से अधिक विस्थापित व्यक्तियों को बसाया जा चुका है। १९५७ के अन्त में २·६४ लाख विस्थापित व्यक्ति उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, बिहार के त्रिपुरा के १६८ शिविरों में थे।

बिहार में लगभग ४६,००० विस्थापित व्यक्तियों को पुनस्संस्थापन वाले स्थानों में भेज दिया गया है और बाकी लोगों को भी १९५८ के अन्त तक बसा देने की आशा है।

पूर्व पाकिस्तान से आए हुए ४.९ लाख विस्थापित परिवारों को फिर से बसाने के लिए अब तक ५० करोड़ रुपए के कर्ज दिए जा चुके हैं। १९५७ के अन्त तक शहरी क्षेत्रों में मकान बनाने के लिए कर्ज के रूप में विस्थापित व्यक्तियों के लिए १४२.६७ लाख रुपए स्वीकार किए जा चुके थे। अब तक सरकार कई राज्यों में ८,३६३ मकान तैयार करवा चुकी है तथा सरकारी सहायता ले कर विस्थापित व्यक्ति भी ३,८१,११६ मकान बनवा चुके हैं। ७१ शहरी तथा ग्रामीण बस्तियों के विकास के लिए २६४.४८ लाख रुपए की रकम स्वीकृत की जा चुकी है।

यद्यपि पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापित व्यक्तियों के सहायता-शिविर काफी समय पहले से ही बन्द किए जा चुके हैं, फिर भी लगभग २०,००० आश्रयहीन महिलाओं तथा बच्चों, बूढ़ों तथा अशक्त व्यक्तियों की देखभाल अब भी सरकार द्वारा चलाए गए आश्रय-गृहों तथा अशक्य-गृहों में की जा रही है, और २,२५० व्यक्तियों को जो अपने घरों में रह रहे हैं, रुपए पैसों की मदद दी जा रही है। इन आश्रय-गृहों की व्यवस्था आदि पर ६ करोड़ से ज़्यादा रुपए खर्च किए जा चुके हैं।

पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए लगभग ५० फीसदी विस्थापितों को निष्क्रमणार्थी भूमि पर तथा कृषि से सम्बन्धित व्यवसायों में लगाया जा चुका है, ५० फीसदी कृषकेतर विस्थापितों को निष्क्रमणार्थी मकानों में बसाया जा चुका है और बाकी लोगों के लिए नए मकान बनाए जा रहे हैं। दिसम्बर १९५७ के अन्त तक सरकार ने तथा सरकारी सहायता प्राप्त करके विस्थापित व्यक्तियों ने विभिन्न राज्यों में कुल मिलाकर लगभग १.६३ लाख निवास स्थानों का निर्माण किया।

इसके अलावा लगभग २ लाख कृषकेतर विस्थापितों को नौकरियों तथा व्यापार आदि में लगाया जा चुका है और लगभग ९०,००० व्यक्तियों को व्यावसायिक तथा प्राविधिक प्रशिक्षण दिया जा चुका है। इसके साथ ही मध्यम तथा छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए ८५ योजनाओं को स्वीकृति दी जा चुकी

है, जिन पर १.२७ करोड़ रुपए खर्च होंगे और जिनसे ८,७०० व्यक्तियों को रोज़गार मिलने की आशा है।

विस्थापित विद्यार्थियों को सुविधाएं देने के लिए सहायक-अनुदानों के रूप में शिक्षा, चिकित्सा तथा सांस्कृतिक संस्थानों को १.८० करोड़ रुपए दिए गए। इसी सम्बन्ध में राज्य सरकारों को भी ३६.५८ लाख रुपए के अनुदान दिए गए।

क्षतिपूर्ति

संसद द्वारा सितम्बर १९५५ में स्वीकृत अन्तिम क्षतिपूर्ति योजना ने नवम्बर १९५३ में स्वीकृत अन्तरिम क्षतिपूर्ति योजना का स्थान ले लिया। इस योजना के अन्तर्गत १०० करोड़ रुपए की सम्पूर्ण निष्क्रमणार्थी सम्पत्ति तथा सरकार द्वारा दिए गए ८५ करोड़ रुपए की सहायता से एक क्षतिपूर्ति कोष स्थापित किया गया। सरकार ने ये ८५ करोड़ रुपए विस्थापितों के लिए उसके द्वारा निर्मित सम्पत्ति के रूप में दिए। इस कोष का उपयोग उस अचल सम्पत्ति के बदले में उन विस्थापित दावेदारों को क्षतिपूर्ति देने के रूप में किया जा रहा है जो वे पाकिस्तान में छोड़ आए हैं। इस योजना में १०,००० रुपए तक के प्रमाणित दावों के लिए नकद भुगतान की भी व्यवस्था की गई है।

दिसम्बर १९५७ के अन्त तक २.४७ लाख दावेदारों को क्षतिपूर्ति के रूप में ७४.० करोड़ रुपए दिए गए। इसके अतिरिक्त अन्तरिम योजना के अन्तर्गत ७९,१०९ दावेदारों को क्षतिपूर्ति की पहली किस्त तथा अन्तिम योजना के अन्तर्गत १,६७,४५९ दावेदारों को पूर्ण क्षतिपूर्ति दी जा चुकी है। १९५७ के अन्त तक लगभग २ करोड़ ३५ लाख दावेदारों को क्षतिपूर्ति दी जा चुकी है तथा बाकी लोगों को अगले दो वर्षों में क्षतिपूर्ति दे दिए जाने की आशा है। इस प्रकार हर तरीके से पाकिस्तान बनने से उखड़े तथा उजड़े हुए लोगों को भारत के नागरिक बनने में सहायता दी गई।

भारत जैसे गरीब देश के लिए, विशेषकर जो अभी-अभी स्वतन्त्र हुआ हो, लाखों शरणार्थियों को बसाने की समस्या बहुत ही भारी थी। यदि पाकिस्तान इस सम्बन्ध में थोड़ा भी सहयोग करता तो दोनों देशों के लिए अच्छा रहता, और निष्क्रान्तों की समस्या दोनों देशों में अच्छी तरह सुलझ जाती। पर पाकिस्तान

की स्थापना ही ऐसे साम्प्रदायिक सिद्धान्तों को लेकर हुई है कि जिसके कारण उससे इस सम्बन्ध में किसी युक्ति-संगत रुख की आशा करना शायद गलत था।

ब्रिटिश शासन में भारत के उद्योगों और कृषि दोनों की दुर्दशा

स्वतन्त्र भारत के सामने जो एक विकट समस्या आई, वह खाद्य की कमी की थी। यह आश्चर्य की बात है कि भारत हमेशा से कृषि-प्रधान देश रहा है, पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने भारत में खेती की उन्नति की ओर ध्यान नहीं दिया। नतीजा यह हुआ कि भारत खाद्य के मामले में अपने पैरों पर खड़ा नहीं रह सका और उसे दूसरों का मुंह ताकना पड़ता था। औद्योगिक माल के लिए भारत को विशेषकर ब्रिटेन का मुंह ताकना पड़ता था, पर खाद्य के मामले में भी उसका आत्मनिर्भर न होना बहुत ही दुखकर रहा।

खाद्य समस्या का रूप

भारत को आबादी बराबर बढ़ती रही। १९३५ तक ऐसी परिस्थिति आ गई कि भारत खाद्य के मामले में एक हद तक दूसरों पर निर्भर हो गया। कुछ ऐसे राजनैतिक कारण भी होते गए, जिनसे भारत की खाद्य समस्या कठिन बनती गई। १९३७ में बर्मा भारत से अलग किया गया। इससे पहले बर्मा का फाल्तू चावल भारत को मिलता था। पर अब यह साधन उससे छिन गया। यदि भारत स्वतन्त्र होता तो इस अभाव की पूर्ति के लिए कुछ करता, पर अंग्रेज़ शासकों ने इस तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। इससे अन्न का अभाव बढ़ता गया।

इसी परिस्थिति में दूसरा महायुद्ध छिड़ा। खाद्य समस्या और भी भयंकर हो गई। खाद्य के क्षेत्र में मुनाफाखोरों और चोरबाज़ारियों का बोलबाला हुआ, जिसका चरम रूप १९४३ में बंगाल के दुर्भिक्ष में दिखाई पड़ा। यह दुर्भिक्ष बहुत कुछ आदमियों के द्वारा लाया हुआ था, इसमें सन्देह नहीं।

जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो उसके साथ ही देश का विभाजन हुआ। उससे पश्चिम पंजाब और सिन्ध के नहर से सींचे हुए इलाके तथा पूर्व बंगाल की धान उपजाने वाली नीची ज़मीनें भारत से अलग हो गईं। इससे भारत की खाद्यसमस्या बहुत ही भयंकर हो गई। १९५० में खाद्य की कमी प्रतिवर्ष ३० लाख टन (१ टन लगभग २७ मन) पहुंच गई थी। इसका

अर्थ यह हो गया कि भारत का सबसे प्रथम कर्तव्य जनता को भुखमरी से बचाने के लिए प्रतिवर्ष ३० लाख टन खाद्य बाहर से मंगाना था।

अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन

स्मरण रहे कि ब्रिटिश सरकार ने १९४३ में ही अधिक खाद्य उपजाओ आन्दोलन का सूत्रपात किया था। युद्ध के ज़माने में जो तजरबे हुए थे, उनके फलस्वरूप ब्रिटिश सरकार इस ओर कदम उठाने के लिए मजबूर हुई थी, परन्तु इसका कोई नतीजा न निकला और खाद्याभाव निरन्तर बढ़ता गया।

स्वतन्त्र भारत की सरकार ने पहली पंचवर्षीय योजना में अन्न उपजाओ आन्दोलन को वैज्ञानिक आधार पर स्थापित किया। हमारे नेताओं ने इस बात को समझ लिया कि यदि भारत को अपने धन का उपयोग बाहर से खाद्य खरीदने में करना पड़ा तो फिर वह यन्त्र आदि नहीं मंगा सकेगा, और देश के औद्योगीकरण के लिए यन्त्रों की सबसे अधिक ज़रूरत थी।

सिंचाई और नदी घाटी योजनाएं

इस कारण व्यवस्थित तरीके से सिंचाई और भूमि विकास कार्यों पर ज़ोर दिया गया। बड़े-बड़े बांधों के साथ-साथ मझले और छोटे बांधों की योजना कार्यान्वित की गई। इनमें से दामोदर घाटी योजना, भाखड़ा नंगल योजना और कई अन्य छोटी-छोटी योजनाएं पूर्णतः या आंशिक रूप से चालू हो चुकी हैं, और हमारी अर्थ-व्यवस्था पर इनका असर भी पड़ रहा है। जिन-जिन क्षेत्रों में नदियों, नहरों की पहुंच नहीं है, उनमें नलकूपों के निर्माण का काम बहुत बड़े पैमाने पर उठाया गया। कुछ प्रमुख नदी घाटी योजनाओं के विषय में नीचे उल्लेख किया गया है।

सुधरे हुए बीज, उर्वरक आदि

सिंचाई के अच्छे बन्दोबस्त के साथ-साथ किसानों को सुधरे हुए बीज, खाद तथा उर्वरक देने की व्यवस्था की गई। पशु-पालन, मछली-पालन और फल तथा तरकारियों के उत्पादन की योजना में सहायता दी गई। हमारे यहां खेती मुख्यतः बहुत पुराने ढंग के हल से ही होती थी, खाद डालने की प्रथा नहीं के बराबर थी। इसलिए इन तरीकों में सुधार और नए तरीकों का प्रचार करना भी ज़रूरी था।

ज़मींदारी प्रथा का खात्मा

पर इनके साथ ही हमारे देश की भूमि व्यवस्था ऐसी थी, जिससे किसानों को प्रोत्साहन नहीं प्राप्त होता था। यदि किसान यह समझे कि वह खेत पर चाहे जितनी मेहनत करे, उसमें चाहे जितनी खाद डाले, वह किसी भी समय खेत से बेदखल किया जा सकता है, तो वह जान लगा कर उसमें काम नहीं कर सकता। इसके अलावा लगान आदि के रूप में जमींदार उनसे जो कुछ वसूल करते थे, उससे वे तो खूब गुलछर्रे उड़ाते थे, पर किसानों की रीढ़ टूट जाती थी। इसलिए ज़मींदारी प्रथा को खत्म करना ज़रूरी था। यदि किसानों के मन में उपज बढ़ाने का चाव न हो तो अन्य बातों से खास नतीजा नहीं होता। इस समय तक विचवैये निकाले जा चुके हैं, और सहकारी खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। सब राज्यों में ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन हो चुका है और सिंचाई की व्यवस्था में उन्नति हो रही है।

कांस से भूमि का उद्धार

बहुत-सी ज़मीन जो कांस से ढक जाने के कारण बेकार पड़ी थी, उसका उद्धार किया जा चुका है। इस काम के लिए केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन नामक एक संस्था की स्थापना की गई, जिसने ट्रैक्टरों की सहायता से १९५५ में १.९ लाख एकड़ ज़मीन का उद्धार किया। अब तक लाखों एकड़ भूमि का उद्धार किया जा चुका है।

चकबन्दी

किसान के रास्ते में जो रोड़े हैं, उनमें एक यह भी है कि उसकी ज़मीनें इधर-उधर बंटी हुई होती हैं, जिससे उसे उन पर देख-रेख रखने में बड़ी कठिनाई होती है। चकबन्दी पर ज़ोर देने के कारण अब किसान अपनी कर्मशक्ति का पहले से अधिक उपयोग कर सकता है।

पहली पंचवर्षीय योजना से अन्न की पैदावार में जो बढ़ती हुई है, उससे मुद्रास्फीति रुकी और हमारी अर्थ-व्यवस्था में स्थिरता आई। पहले जहां ३२ करोड़ ६० लाख एकड़ ज़मीन पर खेती होती थी, वहां अब १९५५-५६ में ३६ करोड़ ३३ लाख एकड़ पर हुई। इसमें से खाद्य पैदा करने वाली ज़मीन का ब्यौरा इस प्रकार है कि पहले २५ करोड़ ७० लाख एकड़ पर खेती होती थी. अब

१९५६-५७ में २७ करोड़ २९ लाख एकड़ पर खेती होनी है। लगभग सब व्यापारी तथा अन्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। अब हम खाद्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ आत्मनिर्भर हो चुके हैं और आशा है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हम और भी उन्नति कर सकेंगे।

देशी रियासतों का भारत में आना

स्वतन्त्र भारत में जिन प्रश्नों को सुलझाया गया, उनमें एक बहुत ही पेचीदा प्रश्न रियासतों का था। प्राचीन हिन्दू तथा मुसलमान सम्राटों के युग में भी भारत छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। ई. पू. छठी शताब्दी में बिम्बिसार और अजातशत्रु नामक राजाओं ने भारत को एक करने की चेष्टा की, पर अशोक के समय में ही भारत का बहुत बड़ा भाग एक सम्राट के अधीन आ सका। इसके बाद गुप्त साम्राज्य के युग में भी इस ओर प्रयत्न हुए। यद्यपि भारत अत्यन्त प्राचीन काल से सांस्कृतिक रूप से एक रहा, पर भारत को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने का प्रयत्न बार-बार असफल होता रहा। जब भी वह कुछ हद तक सफल होता रहा, तो वह किसी महान् नेता के कारण सफल हुआ, और जब वह महान् नेता उठ गया तो फौरन भारत कई हिस्सों में बंट जाता था।

मुसलमान राजाओं के शासन काल में भी भारत की राजनैतिक एकता एक बार स्थापित होती और फिर समाप्त हो जाती। जब अंग्रेज़ भारत में आए, तब भारत कई टुकड़ों में बंटा हुआ था, अंग्रेज़ों ने एक-एक करके भारतीय राज्यों को अपने अधीन करना शुरू किया, पर १८५७ के विद्रोह में ब्रिटिश सरकार को कुछ विशेष तजरबे हुए, जिसके कारण देशी रियासतों को क्रान्ति विरोधी गढ़ों के रूप में बनाए रखने की नीति स्वीकृत हुई। लार्ड केनिंग ने देशी रियासतों के सम्बन्ध में यह कहा कि यदि ये न होतीं और क्रान्ति रूपी आंधी का सामना न करतीं, तो एक महान् तरंग के रूप में यह विद्रोह हमारे सामने आता, जिससे हम बात की बात में बह जाते।

एलफिनस्टोन ने इससे भी स्पष्ट रूप में यह कहा कि यदि सिंधिया, निज़ाम और सिक्ख सरदारों के राज्य ब्रिटिश भारत के अन्तर्गत कर दिए जाते, और छोटी प्रेज़िडेन्सियां खतम हो जातीं, सारी सेना एक ढांचे में संगठित होती और राजस्व की पद्धति एक सांचे में ढाली जाती, तो हम कहीं के नहीं रहते।

इसी के अनुसार १८५८ में महारानी विक्टोरिया के घोषणापत्र में यह बात कही गई कि ब्रिटिश सरकार अपने साम्राज्य को फैलाना नहीं चाहती और वह देशी राजाओं के अधिकार, मर्यादा और सम्मान की रक्षा करना चाहती है। इस प्रकार से भारत के देशी राज्य ब्रिटिश सरकार के थैले के चट्टे बट्टे बन गए। भारत सरकार में एक राजनीतिक विभाग कायम हुआ जो देशी रियासतों के विषय को देखता था। सारे महत्वपूर्ण राज्यों और राज्य समूहों में राजनीतिक विभाग की ओर से राजनीतिक रेज़ीडैण्ट और एजेण्ट तैनात किए गए। देखने में तो देशी रियासतें भारत सरकार के अधीन नहीं थीं, पर असलियत यह थी कि राजनीतिक विभाग की ओर से भेजे हुए रेज़ीडेण्ट और एजेंण्ट राजाओं के सलाहकार ही नहीं, उनके पथप्रदर्शक भी होते थे।

जब भारत के आज़ाद होने की बातचीत चलने लगी, तब अनेक देशी राजा-महाराजा बहुत शंकित हुए और उनमें से कई तो खुल्लमखुल्ला यह कहने लगे कि ब्रिटिश भारत वाले भाग को भले ही ब्रिटिश संरक्षण से अलग कर दिया जाए, पर हमें उससे अलग न किया जाए। कुछ राजा तो स्वतन्त्र होने का स्वप्न देखने लगे।

पर कुछ राजा शुरू ही से देश-भक्ति पूर्ण रुख दिखाते रहे। बड़े राज्यों में से कइयों ने भारत से आज़ाद होने की हवा फैलाई, इनमें तिरुवांकुर, हैदराबाद और भोपाल का नाम लिया जा सकता है। मज़े की बात यह है कि ऐसे छोटे-छोटे राजा जिनकी संख्या ३२७ थी, और जिनका औसत क्षेत्रफल लगभग २० वर्गमील, औसत आबादी लगभग ३,००० और औसत वार्षिक राजस्व २२,००० रु० से अधिक न था, और जिन्हें ब्रिटिश युग में भी अपनी प्रजा को ३ महीने से अधिक सज़ा और २०० रु० से अधिक जुर्माना करने का अधिकार नहीं था, वे भी भारत स्वतन्त्र होने के साथ स्वतन्त्रता पाने का स्वप्न देखने लगे। इस सम्बन्ध में सरदार वल्लभभाई पटेल ने भारत की बड़ी भारी सेवा की और उनके प्रयत्नों से धीरे-धीरे देशी रियासतें भारत में मिलती गईं।

जूनागढ़, हैदराबाद आदि रियासतों के प्रश्नों को उन्होंने जिस बुद्धिमता और दूरदर्शिता से सुलझाया, वे भारत के इतिहास के बहुत रोमांचकारी अध्याय हैं। बिना क्रान्ति के इस प्रश्न को सुलझाना टेढ़ी खीर था। इस प्रश्न को सुलझा लेने के कारण स्वतन्त्रता के बाद भारत वास्तव में एक राष्ट्र बना।

भारत का संविधान

भारत ने जो संविधान बनाया है, वह भी एक बहुत बड़ी सिद्धि है। इतने थोड़े समय के अन्दर संविधान तैयार करना बहुत बड़ी सफलता है। १९४७ के १५ अगस्त को भारत स्वतन्त्र हुआ और २६ नवम्बर १९४९ को भारत की संविधान सभा ने संविधान को अंगीकृत और अधिनियमित कर दिया। २ वर्ष ११ मास १९ दिन के पश्चात् जो संविधान तैयार हुआ, उसमें ३९५ अनुच्छेद और ८ अनुसूचियां थीं।

भारतीय संविधान का ध्येय इन शब्दों में स्पष्ट किया गया :—

(१) यह संविधान परिषद् भारत को एक स्वतन्त्र पूर्णसत्तात्मक गणराज्य घोषित करने और उसके भविष्य को शासन के लिए एक ऐसा संविधान प्रस्तुत करने के अपने दृढ़ और गम्भीर निश्चय को प्रकाशित करती है।

(२) जिसके अन्तर्गत वे प्रदेश, जो अब ब्रिटिश इंडिया में समाविष्ट हैं, वे प्रदेश, जिनसे देशी रियासतें बनी हैं, और भारत के ऐसे अन्य भाग, जो ब्रिटिश इंडिया और रियासतों से बाहर हैं, और ऐसे अन्य प्रदेश, जो स्वतन्त्र पूर्णसत्तात्मक भारत में सम्मिलित होने के इच्छुक हैं, मिलकर एक संघ कहलाएंगे और

(३) जिसके अन्तर्गत उक्त प्रदेश, अपनी वर्तमान सीमाओं के साथ या ऐसी सीमाओं के साथ, जो संविधान परिषद् द्वारा और उसके बाद विधान के नियमों के अनुसार निर्धारित हों, स्वायत्त-शासन इकाइयों का पद प्राप्त करेंगे और उसे धारण करेंगे। उन्हें व शिष्टाधिकार भी प्राप्त होंगे और वे, ऐसे अधिकारों और कर्तव्यों को छोड़कर जो संघ में निहित हैं, या इसे मिले हैं या स्वतः सिद्ध या मिले हुए मान लिए गए हैं, या संघ से ही उद्भूत हुए हैं, शासन और प्रबन्ध के सभी अधिकारों और कर्तव्यों को काम में लाएंगे,

(४) जिसके अन्तर्गत पूर्णसत्तात्मक स्वतन्त्र भारत की समस्त शक्ति और अधिकार, उसके अंगभूत भाग, और शासन के अवयव, जनता के निष्पन्न हैं,

(५) जिसके अन्तर्गत भारत की समस्त जनता को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, दर्जे की, अवसर की और विधान के समक्ष समानता, कानून और शिष्टाचार को ध्यान में रखते हुए विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, पूजा, धन्धा, सम्पर्क और कार्य की स्वतन्त्रता संरक्षित और प्राप्त होगी,

(६) जिसके अन्तर्गत अल्पसंख्यकों, पिछड़े हुए और आदिवासी क्षेत्रों और दलित तथा अन्य पिछड़े हुए वर्गों के लिए पर्याप्त संरक्षण होंगे,

(७) जिसके द्वारा गणराज्य की सीमा की अखण्डता और न्याय, और सभ्य राष्ट्रों के विधान के अनुसार स्थल, समुद्र और वायु में उसके पूर्णसत्तात्मक अधिकार स्थिर रखे जाएंगे, और

(८) यह प्राचीन देश संसार में अपना न्यायसंगत और सम्मानित स्थान प्राप्त करेगा और विश्वशान्ति तथा मानव-कल्याण की अभिवृद्धि के लिए स्वेच्छा से अपना पूरा योग देगा।"

उद्देश्य सम्बन्धी प्रस्ताव में असन्दिग्ध रूप से यह कहा गया है कि सर्वोपरि प्रभुता, संघ तथा उसकी इकाइयों, दोनों क्षेत्रों में जनता में निहित रहेगी, और इस तत्व का उल्लेख संविधान की प्रस्तावना में भी इन शब्दों में कर दिया गया है—"हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।"

सब बालिगों को मतदान का अधिकार

इस संविधान में सब बालिगों को अर्थात् २१ वर्ष की आयु तथा उससे अधिक उम्र के सब लोगों को मताधिकार दिया गया है और जन्म, सम्पत्ति, रंग, जाति अथवा लिंग पर आधारित सब भेद-भावों को दूर कर दिया गया है। हमारा राष्ट्र धर्मनिरपेक्ष है यानी कोई किसी धर्म को भी माने, नागरिकता के अधिकार सबके लिए बराबर हैं।

भारतीय संविधान का ढांचा संघीय है। इसके क्षेत्र दो हैं—संघ और उसके अंगीभूत एकक (इकाइयां) राज्य। दोनों के अधिकार क्षेत्रों का उल्लेख

संविधान में स्पष्टतापूर्वक कर दिया गया है। एक स्वतन्त्र न्यायापालिका की व्यवस्था है जो संविधान की व्याख्या और केन्द्र तथा राज्यों के बीच उठने वाले विवादों का निर्णय करेगी।

सब परिस्थितियों का सामना करने के लिए संविधान को लचकीला रखा गया है। ये मौलिक अधिकार माने गए हैं :—

१. समता का अधिकार

२. स्वतन्त्रता का अधिकार

३. धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार

४. संस्कृति और शिक्षा का अधिकार

५. सम्पत्ति का अधिकार

६. सांविधानिक उपचारों का अधिकार।

अस्पृश्यता का अन्त कर दिया गया है। अस्पृश्यता हमारे माथे पर एक कलंक रहा और उसका अन्त करना ज़रूरी था।

भारतीय संविधान में एक संसद है, जिसके प्रति मन्त्रि-मण्डल उत्तरदायी है। राष्ट्रपति में संघ की समस्त कार्यपालिका शक्ति निहित है।

योजना का प्रारम्भ १९३८ में

इतनी समस्याओं को सुलझाते हुए भी भारत के नेताओं ने इस बात को नहीं भुलाया कि हमारे देश को आगे बढ़ाने के लिए योजना बना कर काम करना चाहिए। योजना बना कर काम करने की बात का महत्व १९३८ में ही हमारे नेताओं के निकट स्पष्ट हो चुका था। उस साल राष्ट्रीय कांग्रेस की ओर से योजना कमेटी बनाई गई और श्री जवाहरलाल नेहरू इस कमेटी के अध्यक्ष बनाए गए। परन्तु दूसरे महायुद्ध छिड़ जाने और स्वाधीनता आन्दोलन में राष्ट्रीय नेताओं के जेल चले जाने से इस सम्बन्ध में प्रगति नहीं हो सकी। १९४४ में बम्बई योजना प्रकाशित हुई। उसके बाद कई एक अन्य योजनाएं हमारे सामने आईं।

योजना आयोग की नियुक्ति

स्वतन्त्रता के बाद योजना आयोग की नियुक्ति हुई। उस पर यह भार डाला गया कि वह हमारे साधनों का लेखा-जोखा तैयार करवाए और ऐसी योजना बनाए कि उनका सर्वोत्तम ढंग से उपयोग करके तीव्र गति से देश का विकास हो सके। १९५१ की जुलाई में योजना का मसविदा प्रकाशित कर दिया गया। फिर इस पर सार्वजनिक रूप से आलोचना हुई और १९५२ के दिसम्बर में भारतीय संसद के सामने पहली पंचवर्षीय योजना का अन्तिम रूप पेश हुआ।

पंचवर्षीय योजना में यह लक्ष्य सामने रखा गया कि प्रति व्यक्ति औसत आमदनी बढ़े। इसका दूसरा मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय की स्थापना अर्थात् सामाजिक विषमताओं को दूर करना रखा गया। हमारे यहां धन के विभाजन में बड़ा फर्क है। यह समझा गया कि यदि लोकतन्त्र को पनपाना है तो इन विषमताओं को दूर करना पड़ेगा। पहले हम ज़मींदारी प्रथा के उच्छेद का उल्लेख कर चुके हैं, यह भी इस ओर एक कदम था।

संसार में अन्य देशों में भी अनेक योजनाएं बनी हैं। पर हमारी योजना की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि लोकतांत्रिक उपायों से काम लेते हुए राष्ट्रीय जीवन के सारे पहलू इसमें आ गए।

पहली योजना की सफलताएं

यह योजना बहुत अधिक सफल रही। खेती-बाड़ी और औद्योगिक उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई। चीज़ों के दाम भी नहीं बढ़े, वैदेशिक हिसाब-किताब भी सन्तुलित है।

पहली योजना के पांच वर्षों में यानी १९५०-५१ से १९५५-५६ में राष्ट्रीय आय ८,८७० करोड़ रुपए से बढ़ कर १०,४२० करोड़ रुपए हो गई। पहले प्रति व्यक्ति आय २४६ रुपए थी, वह इस दौरान में २७२ रुपए हो गई। उपभोग प्रति व्यक्ति ८ प्रतिशत ही बढ़ा जिससे पूंजी विनियोग के लिए अच्छी गुंजाइश पैदा हो गई। खाद्यान्न का उत्पादन ५४० लाख टन से बढ़ कर ६४९ लाख टन, कपास का उत्पादन २९.७ लाख गांठों से ५० लाख गांठें, पटसन का उत्पादन ३३ लाख गांठों से ४२ लाख गांठें, बिजली की प्रस्थापित क्षमता २३ लाख किलोवाट से ३४ लाख किलोवाट, सिंचाई वाली भूमि ५१० लाख एकड़

से ६५० लाख एकड़, तैयार इस्पात ९.८ लाख टन से १२.८ लाख टन, सीमेंट २६.९ लाख टन से ४५.९ लाख टन, अमोनियम सल्फेट ४६.३ हज़ार टन से ३९४ हज़ार टन, रेल इंजनों का उत्पादन ३ से लेकर १७९ पटसन से बनी वस्तुएं ८२४ हज़ार टन से १,०५४ हज़ार टन, मिल का बना वस्त्र, ३७,१८० लाख गज़ से ५१,०२० लाख गज़, जहाज़रानी ३.९ लाख जी० आर० टी० से ४.८ लाख जी० आर० टी०. राष्ट्रीय राजपथ १२.३ हज़ार मील से १२.९ हज़ार मील हो गया। इसी प्रकार अस्पतालों की संख्या ११३ हज़ार से १३६ हज़ार, प्राथमिक स्कूलों की संख्या २०९.७ हज़ार से २८० हज़ार हो गई।

दूसरी पंचवर्षीय योजना

दूसरी पंचवर्षीय योजना निम्न मुख्य लक्ष्यों को ध्यान में रख कर बनाई गई है :—

(क) राष्ट्रीय आय के स्तर में इतनी वृद्धि जिससे देश के रहन-सहन का मानदण्ड ऊंचा हो,

(ख) मूल तथा भारी उद्योगों के विकास पर विशेष ज़ोर देते हुए देश का तेज़ी से औद्योगीकरण,

(ग) रोज़गार सम्बन्धी सुविधाओं का अधिक विस्तार, और

(घ) आय तथा सम्पत्ति की विषमताओं का निराकरण तथा आर्थिक शक्ति का पहले से अधिक समान वितरण।

उद्देश्य-समाजवादी समाज

पहले ही यह बताया जा चुका है कि पहली पंचवर्षीय योजना में इस्पात का उत्पादन बढ़ाया गया। दूसरी योजना में तीन इस्पात के कारखानों को पूरा किया जा रहा है जिनका यहां विशेष रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए। उड़ीसा के राउरकेला में लगभग १२८ करोड़ रुपए की लागत पर १९६१ तक एक कारखाना चालू हो जाएगा जो हर साल लगभग ७ लाख २० हज़ार टन इस्पात बनाएगा। इसी प्रकार मध्य प्रदेश के भिलाई में ११० करोड़ की लागत पर एक कारखाना चालू हो रहा है जो ७ लाख ७० हजार टन इस्पात उत्पन्न करेगा। तीसरा कारखाना पश्चिम बंगाल के दुर्गापुर में खुल रहा है जिसके संयंत्र पर ११५ करोड़ रुपए खर्च आएंगे और

इससे प्रतिवर्ष लगभग ८ लाख टन इस्पात उत्पन्न होने की आशा है। इसके अलावा जो पहले से मिलें चालू हैं, उनका उत्पादन बढ़ाया जा रहा है।

अब यह स्वीकृत हो चुका है कि हमारी आर्थिक नीति का उद्देश्य समाजवाद की स्थापना है। इसका अर्थ यह है कि आर्थिक व्यवस्था का आधार व्यक्तिगत मुनाफा नहीं, वल्कि सामाजिक लाभ हैं :—उत्पादन, वितरण, उपभोग, पूंजी विनियोग आदि आर्थिक कार्य ही नहीं सामाजिक-आर्थिक, सम्बन्धों की सारी रूपरेखा ही सामाजिक लाभ के उद्देश्य को दृष्टि में रख कर संचालित होगी। यह मान लिया गया है कि आर्थिक विकास का लाभ अधिकाधिक रूप से समाज के कम सम्पन्न वर्गों को पहुंचना चाहिए और इसी प्रकार आय, धन तथा आर्थिक सत्ता का केन्द्रीयकरण धीरे-धीरे घटाते जाना चाहिए।

थोड़े में, दूसरी पंचवर्षीय योजना में केन्द्र और राज्यों की सरकारों को मिला कर, पांच वर्षों में ४८ सौ करोड़ रुपए सिंचाई, विजली, खेती (जिसके अन्तर्गत सामुदायिक योजना तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवाएं भी हैं), उद्योग, खनिज, परिवहन और संचार और समाज सेवाओं पर (जिनमें मकान वनाने और विस्थापितों का पुनर्वास भी सम्मिलित है) यह राशि खर्च होगी।

सामुदायिक विकास

प्रथम योजनाकाल में लगभग ५२.४ करोड़ रुपए के व्यय से १,२०० खण्डों—७०० खण्ड सामुदायिक विकास के अन्तर्गत तथा ५०० खण्ड राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत—का कार्य आरम्भ करने का लक्ष्य पूरा कर लिया गया है। दूसरी योजना में १९६०-६१ तक सम्पूर्ण देश को राष्ट्रीय विस्तार सेवा खंडों के अन्तर्गत ले आने का लक्ष्य रखा गया है। इन विस्तार सेवा खण्डों में से ४० प्रतिशत खण्ड सामुदायिक विकास खण्डों में परिवर्तित किए जाने हैं। इस कार्य के लिए २०० करोड़ रुपए की रकम निर्धारित की गई है।

१९५७-५८ में १८९½ भरपूर विकास खण्ड तथा ५९७ राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड आरम्भ किए गए जिनके अन्तर्गत क्रमशः १.१२ करोड़ की आवादी के २५,५३० गांव तथा ३.७२ करोड़ की जनसंख्या के ६०,००४ गांव आते हैं।

जून १९५७ के अन्त तक सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ६.३ करोड़ व्यक्तियों से युक्त १,१८,९५७ गांव तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत ८.६ करोड़ व्यक्तियों से युक्त १,५७,०६९ गांव आ चुके थे। १९६०-६१ तक के ३ वर्षों में देश में २,६५० राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड और आरम्भ हो चुके होंगे जिनमें से ९२० खण्ड सामुदायिक विकास खण्डों में परिवर्तित कर दिए जाएंगे।

सफलताएं

आदिमजातीय क्षेत्रों के भरपूर विकास के लिए पांच वर्षों के विशेष कार्यक्रमों के साथ ४२ विशेष बहुद्देश्यीय खण्ड स्थापित किए गए हैं, जिनमें से प्रत्येक पर प्रतिवर्ष २७ लाख रुपए व्यय किए जाने का लक्ष्य रखा गया है।

सामुदायिक विकास खण्डों में छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से ९ बड़े औद्योगिक क्षेत्र तथा २० छोटे तथा ग्रामीण औद्योगिक क्षेत्र स्थापित किए गए हैं।

इसके अलावा ५९,००० नई सहकारी समितियां स्थापित की गईं तथा ३० जून, १९५७ तक ३१.१ लाख अतिरिक्त सदस्य बनाए गए।

३० जून, १९५७ तक सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार खण्डों में प्राप्त सफलता का विस्तृत व्यौरा नीचे दिया गया है :—

२,०७,१८,००० मन उर्वरक वितरित किया गया, ३२,९०,००० कृषि सम्बन्धी प्रदर्शन किए गए, १,००,३६,००० मन उन्नत बीज वितरित किया गया, १०,२६,००० एकड़ भूमि में गल्ला तथा सब्ज़ी बोई गई, ५,३२६ केन्द्र-ग्राम स्थापित हुए जहां पशुओं की नस्ल उन्नत करने का काम जारी है, २८,००० ऊंची नस्ल के पशु दिए गए, २३,२९,००० एकड़ भूमि सुधारी गई, ३८,०७,००० एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई आरम्भ हुई, ३,८५९ प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किए गए, १,२५९ मातृ कल्याण एवं शिशु कल्याण केन्द्र स्थापित किए गए, २,२०,००० ग्रामीण टट्टियां बनाई गईं, ८३,००० कुएं बनाए गए, १,१९,००० कुएं सुधारे गए, १ २१,००,००० गज़ नालियां खोदी गईं, २५,००० नए स्कूल स्थापित किए गए, १०,३२५ बुनियादी स्कूलों में परिवर्तित स्कूल बनाए गए, ७०,००० प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र स्थापित किए गए, १८,७९,००० प्रौढ़ व्यक्तियों ने शिक्षा प्राप्त की,

१,५०,००० सामुदायिक केन्द्र स्थापित किए गए, १,६९,००० जन-संगठनों का विकास हुआ, ५९,००० नई सहकारी समितियां स्थापित की गईं, तथा ९,९४० मील पक्की सड़कें बनाई गईं।

जन-सहयोग तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम

अब तक जो कुछ सफलता प्राप्त हुई है, वह जनता के सक्रिय सहयोग के कारण ही सम्भव हुई। सितम्बर १९५६ तक जनता से जो सहयोग प्राप्त हुआ, उसका मूल्य ४५.६ करोड़ रुपए लगाया जा सकता है।

कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए एक व्यापक कार्यक्रम आरम्भ कर दिया गया है। इस समय ग्राम-सेवकों के लिए ६८ विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र हैं। ७८ बुनियादी कृषि स्कूलों तथा १८ कृषि कारखानों में कृषि का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। ग्राम सेविकाओं के प्रशिक्षण के लिए विस्तार सेवा केन्द्रों तथा दो गृह-अर्थशास्त्र केन्द्रों से सम्बद्ध २५ गृह अर्थशास्त्र विभाग हैं। सामूहिक रूप से कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के लिए २७ प्रशिक्षण केन्द्रों को स्वीकृति दी जा चुकी है।

समाज-शिक्षा संगठन कर्ताओं के लिए १४ प्रशिक्षण केन्द्र तथा खण्ड विकास अधिकारियों के लिए ४ प्रशिक्षण केन्द्र हैं। खण्ड स्तर के विस्तार अधिकारियों (सहकारिता तथा उद्योग) के लिए इस समय देश में कुल मिलाकर १९ प्रशिक्षण केन्द्र हैं।

३ प्रशिक्षण केन्द्रों में स्वास्थ्य कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इनके अतिरिक्त सहायक दाई-प्रसाविकाओं के प्रशिक्षण के लिए ६६ से अधिक संस्थान, स्वास्थ्य निरीक्षिकाओं के प्रशिक्षण के लिए ९ केन्द्र तथा प्रसाविकाओं के प्रशिक्षण के लिए ६ केन्द्र हैं।

राज्य सरकारें क्षेत्रीय तथा राज्य स्तरों पर तथा केन्द्रीय सामुदायिक विकास मन्त्रालय राष्ट्रीय स्तर पर गोष्ठियों का आयोजन करता है। इन गोष्ठियों का उद्देश्य कार्यकर्ताओं को परस्पर विचारों तथा अनुभवों का आदान-प्रदान करने का अवसर देना है।

प्रत्येक खण्ड में गांवों के स्कूलों के अध्यापकों के लिए एक मास के शिविरों का आयोजन किया जाता है। इस प्रकार से प्रशिक्षित अध्यापक स्कूलों के बच्चों तथा ग्राम समाज में विकास सम्बन्धी विचारों का प्रसार करते हैं।

दूसरे देश भारत के पद-चिन्हों पर

भारत को सामुदायिक विकास कार्यक्रम में जो सफलता मिली है, उसके कारण बहुत से देशों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। बर्मा, श्रीलंका, अफगानिस्तान, मिस्र और फिलीपीन को मिला कर करीब एक दर्जन देशों ने भारत के सामुदायिक विकास कार्यक्रम की कार्य-प्रणाली तथा अनुभवों को जानने के लिए अपने अधिकारियों के अध्ययन-दल भेजे। मध्यपूर्व के छः देशों से कुछ अधिकारी हैदराबाद के प्रशिक्षण केन्द्र में प्रशिक्षण के लिए आए।

इन्दोनेशिया और ईरान ने अपने यहां भी ऐसा ही कार्यक्रम चालू करने के बारे में सलाह देने के लिए सामुदायिक योजना प्रशासन के प्रधान तथा सचिव को अपने यहां आमन्त्रित किया।

समाजवादी समाज की रचना के अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति के उद्देश्य से देश के नेता इस कार्यक्रम को कितना महत्वपूर्ण समझते हैं, यह इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने सामुदायिक योजना प्रशासन को एक पूरे केन्द्रीय मन्त्रालय का रूप दे दिया है।

भारत की अन्तर्राष्ट्रीय नीति और पंचशील

भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में क्या लक्ष्य रखा है और उसे वह किस तरह निभा रहा है, इसका थोड़ा-सा परिचय इस पुस्तिका के शुरू में दिया गया है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि भारत विश्व के दो शक्ति गुटों से अलग रहा है और अब सारे संसार में कई देश ऐसे हो गए हैं, जो यह सम्भव मानते हैं कि इन दो गुटों से अलग रहा जा सकता है, बल्कि कुछ देश यह भी समझने लगे हैं कि दोनों गुटों को लड़ाई से बचाए रखने का यही सबसे अच्छा उपाय है। भारत ने कोरिया, वीएतनाम से लेकर स्वेज़ नहर और लेबनान तक के सम्बन्ध में अपनी सेवाएं अर्पित की हैं। पंचशील के रूप में भारत ने सारे देशों के सामने व्यावहारिक कार्यक्रम रखा है। जैसा कि स्वतन्त्रता दिवस पर बोलते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था—"हमने, आपने सुना है कि हिन्दुस्तान

से दो लफ्ज निकले—आज नहीं हज़ारों बरस हुए। लेकिन इस ज़माने में उन्होंने एक नए माने पकड़े. और वे दुनिया में फैले। "पंचशील" नाम है उनका। मुल्कों में किस तरह से आपस में बरताव हो और एक दूसरे से नाता और रिश्ता क्या हो? इनके पीछे कितनी ही पुरानी और नई बातें हैं। ये विचार हल्के-हल्के फैले हैं और बहुत सारे मुल्कों ने उनको तस्लीम किया है, क्योंकि आज-कल की दुनिया में और कोई चारा ही नहीं। सिर्फ दो रास्ते हैं—एक लड़ाई का और तबाही का, और दूसरा अमन और पंचशील का। कोई तीसरा रास्ता नहीं है। सारी दुनिया यह बात हल्के-हल्के समझने लगी है।"

यह भारत के लिए बहुत ही बड़ी बात है कि वह अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शान्ति का एक बहुत बड़ा पहरेदार सिद्ध हो रहा है। हमारे प्रधान मन्त्री ने उक्त अवसर पर सूत्र रूप से कहा--हमारी दोस्ती हर मुल्क से है।

SJ23?–विश्व भारतीय प्रेस, नई दिल्ली–(59)–2,000